Gyanshauryam, International Scientific Refereed Research Journal
© 2020 GISRRJ | Volume 3 | Issue 5 | ISSN : 2582-0095

मीमांसा दर्शन में कर्मवाद एक अनुशीलन

इन्दल
पूर्व शोधच्छात्र,
संस्कृत विभाग,
बी0आर0डी0बी0डी0पी0जी0 कॉलेज, आश्रम बरहज
देवरिया, उत्तर प्रदेश,भारत।

Article Info
Volume 3 Issue 5
Page Number: 88-92
Publication Issue :
September-October-2020

Article History
Accepted : 15 Oct 2020
Published : 26 Oct 2020

शोध सारांश– मीमांसा दर्शन में कर्म का अनुष्ठान अभिष्ठ है, परित्याग नहीं। इसी कारण वैदिक दर्शन का प्राण तत्व मीमांसा दर्शन है। चूंकि कर्मकाण्ड की उपादेयता मीमांसा को मान्य है, अतः वह कर्म को ही ईश्वर मानता है।

मुख्य शब्द–मीमांसा, दर्शन, कर्म, वैदिक, कर्मकाण्ड, ईश्वर, संस्कृत, आस्तिक, नास्तिक।

संस्कृत वाङ्मय को देववाणी या सुरभारती कहा जाता है। इस वाङ्मय में अनेकानेक रचनाएँ हुई हैं। वेद, उपनिषद्पुराण से लेकर विभिन्न दर्शनों का विकास क्रमबद्ध भाषा में हुआ है।

भारतीय दर्शन के दो रूप हैं– 1 आस्तिक, 2– नास्तिक। आस्तिक दर्शन में षड् दर्शन आते हैं तथा नास्तिक में चार्वाक, बौद्ध और जैन का नाम आता है। इनमें भी मीमांसा दर्शन वेद आधारित होने से अपना अलग स्थान रखता है। मीमांसा का अर्थ है पूजित विचार, पूजित जिज्ञासा या वस्तु के स्वरूप का यथार्थ वर्णन।

भारतीय दर्शन में वेदों का महत्त्व सर्वज्ञात है। वेदों को मानने के कारण ही सांख्य–योग, न्याय–वैशैषिक, मीमांसा और वेदान्त एक षड् आस्तिक दर्शन कहलाते हैं। क्योंकि यह पूर्णतः वेदों पर आधारित है।[1]

Copyright : © the author(s), publisher and licensee Technoscience Academy. This is an open-access article distributed under the terms of the Creative Commons Attribution Non-Commercial License, which permits unrestricted non-commercial use, distribution, and reproduction in any medium, provided the original work is properly cited

वस्तुतः इसका काम कोई नया दर्शन प्रस्तुत करना नहीं वरन् वैदिक धर्म एवं मित्र की विस्तृत व्याख्या करना है।

वैदिक संस्कृति का विकास दो रूपों में हुआ है पहला तो वेदो में ब्राह्मण ग्रन्थों के यज्ञादि कर्मकाण्ड का शास्त्री विकास हुआ तो दूसरी ओर उपनिषदों के ज्ञानकाण्ड के आधार पर वैदिक दर्शन का विकास हुआ है।

बौद्धमत के उदय के पश्चात् वैदिक कर्मकाण्ड पर अनेक शंकाएं उत्पन्न होने लगी लोगों को यह संदेह होने लगा था कि रीतियों और कर्म का कोई मूल्य नहीं है, हवन, यज्ञ, बलि आदि कर्मों का कोई लाभ नहीं है ऐसी स्थिति में वैदिक धर्मानुयायियों के लिए आवश्यक हो गया कि वैदिक साहित्य में उपलब्ध यज्ञ का निरीक्षण किया जाये ताकि लोगों के सामने उसे निर्दोष रूप में रखा जा सके।

ई0पू0 चौथी शदी में आचार्य जैमिनी ने ऐसा ही एक प्रयत्न किया इनका ग्रंथ 'मीमांसा सूत्र' नाम से प्रसिद्ध है तथा यह मीमांसा दर्शन का आधार है। मीमांसको के अनुसार स्वर्ग ही जीवन का चरम लक्ष्य है तथा स्वर्ग की प्राप्ति कर्म के द्वारा ही संभव है। जो स्वर्ग चाहते है उन्हें कर्म करना चाहिये, मीमांसा उन्हीं कर्मों का पालन आवश्यक मानता है जो धर्म के अनुकूल हो।

धर्म का अर्थ है– **''वेद विहित कर्त्तव्य''।**

मीमांसा दर्शन में कर्म पर अत्यधिक जोर दिया गया है इसका कारण कर्म ही सर्वश्रेष्ठ है। कर्म करने से फल अवश्य उत्पन्न होता है। मीमांसा दर्शन के आदि आचार्य जैन ने कर्म को ही फलदाता मानते हैं तथा कर्म खुद ही परिणाम उत्पन्न करता है, ऐसा मानते हैं।[2]

कर्म का शाब्दि अर्थ है– काम या क्रिया। कर्म भाग्य नहीं है, आदमी कर्म करता जाये, इससे इसके भाग्य की रचना स्वतः होती रहेगी। कर्म हिन्दू धर्म की वह अवधारणा है, जो एक प्रणाली के अध्ययन से कार्य कारण के सिद्धांत की व्याख्या करती है। जहाँ माना जाता हितकर कर्म का परिणाम हितकर और अहितकर कर्म का परिणाम हानिकर होता है। इस प्रकार पुर्नजन्म का एक चक्र बनाते हुए आत्मा के जीवन में पुनः अवतरण या पुर्नजन्म की क्रिया और प्रतिक्रिया की एक प्रणाली की रचना होती है अर्थात् कार्य कारण सिद्धान्त न केवल भौतिक दुनिया में

लागू होता है, बल्कि हमारे विचारों, शब्दों और उन सभी कार्यों पर भी लागू होता है, जो हम किया करते हैं।[3]

मीमांसा दर्शन में कर्म–फल के लिए 'अपूर्व' नामक सिद्धांत प्रतिपादित है। अपूर्व का शाब्दिक अर्थ है– 'वह जो पहले नहीं था।' अर्थात् इस लोक में किये गये कर्म एक अदृष्ट शक्ति उत्पन्न करते हैं, जिसे अपूर्वक कहा जाता है। इस अपूर्व के आधार पर ही आत्मा को सुख और दुख भोगना पड़ता है। जब पुर्नजन्म का चक्र समाप्त होता है, या कर्म का बन्धन समाप्त होता है तब व्यक्ति को मोक्ष की प्राप्ति होती है। मीमांसा दर्शन मोक्ष के लिए किसी दैवत्व को अस्वीकार करता है और कर्म को स्वतंत्र रूप से क्रियाशील मानता है। यह भी मानता है कि कार्य कारण के सम्बन्ध में प्राकृतिक नियम कर्म के प्रभाव की व्याख्या के लिए पर्याप्त है। अर्थात् अपूर्व सिद्धांत सार्वभौम नियम कर्म के प्रभाव की व्याख्या के लिए पर्याप्त है। अर्थात् अपूर्व सिद्धान्त सार्वभौम नियम हैं, जो मानते हैं कि बाधाओं के हट जाने से प्रत्येक वस्तु में निहित शक्ति कुछ न कुछ फल अवश्य देती हैं। मीमांसा दर्शन में कर्म के साधारणतया दो प्रकार बताए गए हैं– 1– अर्थ कर्म, 2– गुण कर्म।

अर्थ कर्म वे हैं, जो आत्मगत अपूर्व उत्पन्न करते हैं जैसे– अग्निहोत्र, दर्शपूर्णमास कर्म।

गुणकर्म वे हैं, जिनसे संस्कार उत्पन्न होते हैं, तथा अर्थ कर्म द्रव्य की अपेक्षा कर्म प्राद्यान्य रहता है।[5]

मीमांसा दर्शन का प्राण तत्व वेद है तथा वेद विहित कर्म का अनुष्ठान है। वेद में अनेक प्रकार के कर्मों की चर्चा हुई है। जैसे–

1– नित्य कर्म– अर्थात् प्रत्येक दिन के किये जाने वाले कर्म। जैसे–ध्यान, स्नान, सन्ध्या पूजा आदि।

2– नैमित्तिक कर्म– अर्थात् विशेष अवसर पर किये जाने वाले कर्म। जैसे– चन्द्रग्रहण और सूर्यग्रहण के समय किया जाने वाला पूजा–अर्चना आदि।

3– काम्य कर्म– अर्थात् निश्चित फल प्राप्ति के उद्देश्य से किया जाने वाला कर्म। जैसे– स्वर्ग की इच्छा से यज्ञ करना।

4– निषिद्ध कर्म–ऐसे कर्म जिनके करने से पाप का संचय होता है।

5– प्रायशिचत कर्म– निषिद्ध कर्मों के करने से पाप संचय होता है और उनसे बचने के लिए जो वेद विहित कर्म किये जाते हैं, वो प्रायश्चित कर्म कहलाते हैं।

इनमें नित्य और नैमित्तिक कर्म को वेद का आदेश समझ कर करना चाहिए।[6] इस प्रकार हम देखते हैं कि मीमांसा दर्शन में निष्काम कर्म को ही धर्म माना गया है। अर्थात् कर्त्तव्य का पालन हमें इसलिए नहीं करना है कि इनके करने से हमारा उपकार होगा, बल्कि इसलिए करना चाहिए कि हमें कर्त्तव्य करना है। मीमांसा दर्शन के इस सिद्धान्त को पाश्चात्त्य दार्शनिक काण्ट भी मानता है। वह भी कहता है– कर्त्तव्य कर्त्तव्य के लिए (Duty for duty's sake) होना चाहिए, भावनाओं या इच्छाओं के लिए नहीं। मीमांसा का यह सिद्धान्त भगवद्गीता से साम्यता रखता है। जैसे भगवद्गीता का निष्काम कर्म। एक व्यक्ति को कर्म के लिए प्रयत्नशील रहना चाहिए तथा कर्म के फल की चिन्ता नहीं करनी चाहिए।[7] ''कर्मण्येवाधिकारस्ते मा फलेषु कदाचन।''[8]

इस प्रकार मीमांसा दर्शन में कर्म का अनुष्ठान अभिष्ठ है, परित्याग नहीं। इसी कारण वैदिक दर्शन का प्राण तत्व मीमांसा दर्शन है। चूंकि कर्मकाण्ड की उपादेयता मीमांसा को मान्य है, अतः वह कर्म को ही ईश्वर मानता है।

संदर्भ ग्रन्थ सूची

1– भारतीय दर्शन, भाग–1, डॉ0 राधा कृष्णन।

2– भारतीय दर्शन की रूप–रेखा, प्रो0 हरेन्द्र प्रसाद सिन्हा।

3– भारतीय दर्शन की रूप–रेखा, प्रो0 हरेन्द्र प्रसाद सिन्हा।

4– भारतीय दर्शन, भाग–1, डॉ0 राधा कृष्णन।

5– भारतीय दर्शन, भाग–1, डॉ0 राधा कृष्णन।

6– भारतीय दर्शन की रूप–रेखा, प्रो0 हरेन्द्र प्रसाद सिन्हा।

7– भारतीय दर्शन की रूप–रेखा प्रो0 हरेन्द्र प्रसाद सिन्हा।

8– श्रीमद् भगवद्गीता, अध्याय–2–47।

9– संस्कृत साहित्य का इतिहास, भोलानाथ तिवारी।

10– संस्कृत साहित्य का इतिहास, हलधर मिश्र।

11– मीमांसा परिभाषा–गांगाधर मिश्र मैथिल।